International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 228-229

मध्यकालीन भक्ति संतो में मीराबाई

पवन कुमार
प्रवक्ता इतिहास, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विधालय, उखलचना जिला झज्जर, हरियाणा, भारत।

सारांश
मध्यकालीन भारत में धार्मिक जीवन के क्षेत्र में एक नई लेकिन महत्वपूर्ण चेतना का विकास हुआ । यह नई चेतना भक्ति के सिद्धान्त से ली गई है भेक्ति को हिन्दु धर्म मं मौक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता है। भक्ति का अर्थ प्रेम सहित अपने अराध्य देव को स्वयं कों सर्मपित कर उसकी स्तूति करने से लिया जाता है। विभिन्न सम्प्रदायों ने अपने अपने ईष्टदेव को प्रसन्न करने के लिये अनेक पदों की रचना की है। मध्यकालीन संतों में मीराबाई एक ऐसी सन्त थी जो कृष्ण भक्ति के संतों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। प्रस्तुत लेख में मीराबाई के बारे में एवं उनकी भक्ति भावना के बारे में जानने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्द : मध्यकालीन भक्ति, संतों, मीराबाई, कृष्ण भक्ति।

प्रस्तावना

भक्ति एक परिचय

मध्यकालीन भक्ति का आरम्भ तमिलभाषी क्षैत्र से आरंभ हुआ। अनेक संतो ने अपने अपने अष्टदेव की स्तुति करते हुये भक्ति को प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसके लिये उन्होनें तत्कालीन स्थानीय भाषा जो अपने संदेशों में शामिल किया। इन्हीं संतों में रामानन्द संत को भक्ति को उत्तर भारत में लाने का श्रेय दिया जाता है। मध्यकालीन सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में घटित यह घटना कोई सामान्य घटना या हलचल नहीं, अपितु एक व्यापक आंदोलन था जो प्रवाह के रूप में चला और संपूर्ण मध्यकाल को ही नहीं बल्कि वर्तमान काल को भी प्रभावित किए हुऐ हैं। वासुदेव शरण अग्रवाल की दृष्टि में यह मध्ययुगीन भक्ति आंदोलन भारतीय संस्कृति के पुनर्जागरण का द्योतक है।

इस मध्ययुीगीन भक्ति में आलवार व नयनार सन्तो ने क्रमशः विष्णु एवं शिव को इष्टदेव मानकर उनकी स्तुति की है। वैष्णो भक्ति विकास क्रम में रामभक्ति सर्वप्रथम दक्षिण के आलवार संतो की वाणी से प्रस्फटित हुई तथा बाद में उत्तरी भारत में इसका विकास हुआ। मध्ययुग में कृष्ण भक्ति का प्रचार ब्रजमण्डल में बड़े उत्साह और भावना से हुआ। इस सम्बन्ध में बल्लभ, निम्बार्क, राधाबल्लभ, हरिदासी और चैतन्य सम्प्रदाय विशेष रू॰ से उल्लेखनीय है। परन्तु इस काल में कुछ ऐसे कवि भी हुये हैं जिन्होनें सम्प्रदाय विशेष में ना बन्धकर कृष्ण की भक्ति का वर्णन स्वतन्त्र भाव से किया है। इन कवियों में मीराबाई का प्रमुख स्थान है।

मीराबाई एक सन्त

मीराबाई का जन्म राठौरों की मेडतिया शाखा के अन्तर्गत राव दूदा जी के चौथे पुत्र रतन सिंह के घर कुड़की राजस्थान में हुआ[1]। जब मीरा दो वर्ष की थी जब इनकी माता का देहान्त हो गया था। रतन सिंह के यूद्धों में व्यस्त रहने के कारण राव दूदा मीरा को अपने पास मेडता ले आए। राव दूदा परम् वैष्णव भक्त थे इनके ही प्रभाव से मीरा के मन में गिरधर गोपाल के प्रति अन्नय आस्था उत्पन्न हुई। मीरा बाई का विवाह चित्तोड़ के महाराणा सांगा के बड़े पुत्र भौजरज से 12 वर्ष की अवस्था में हुआ[2]। दुर्भाग्यवश विवाह के साल साल के बाद भोजराज की मृत्यु हो गई। मीरा तत्कालीन प्रथा के अनुसार सती नहीं हुई क्योंकि मीरा ने स्वयं को गिरधर गोपाल की चिरसुहागिनी मान लिया था। वे संसार की ओर से विरक्त हो गई और साधु संन्तों की संगति में हरि कीर्तन करते हुये समय व्यतीत करने लगी। इन्होनें राज मर्यादा और लोकलाज को छोड़ा और राजकुल का अत्यन्त कठोर विरोध भी सहा। द्वारिका में इनकी मृत्यु हुई। कहा जाता है कि रणछोड़ जी की मूर्ति ने इन्हें अन्तर्हित कर लिया था–अब मिली विछुरन नहिं कीजै[3]।

ऐसा कहा जाता है कि मीरा ने घर वालों के व्यवहार से तंग आकर गौस्वामी तुलसीदास को पद लिख कर भेजा था और उनसे परामर्श मांगा था जिसके उत्तर में गोस्वामी ने जाकै प्रिय न राम विद्वेही लिख कर भेजा। मीरा के गुरू के सम्बन्ध में इतना जान लेना आवश्यक है कि इन पर सन्त समुदाय और चैतन्य मतानुयायियों दोनों का प्रभाव था[4]। मीरा बाई कृष्ण की अन्नय भक्त थी। उन्हें विशेष रूप से किसी सम्प्रदाय में नहीं बांधा जा सकता। मीरा ने कृष्ण भक्ति ने अपना सबकुछ सौंप दिया। इन्होनें श्री कृष्ण को मन ही मन अपना पति मान लिया था। मीरा अक्सर गाती रहती थी–

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरों न कोई।
जाकै सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई।

यदि इनकी भक्ति का बीज खोजा जाये तो वह प्राचीन आलवार परम्परा की भक्ति संत आंडाल की भक्ति में उपलब्ध होगा जिन्होनें कृष्ण के प्रेम मे कहा था'' मैं अब पूर्ण यौव हो गई हूं और स्वामी कृष्ण के अतिरिक्त ओर किसी को अपना पति नहीं बना सकती हूं[5]। मीरा की भक्ति एक माधुर्य भाव की भक्ति थी। इन्होनें कृष्ण को अपना आध्यात्मिक पति स्वीकार कर लिया था। इन्होनें लोकलाज का परित्याग कर दिया था। वे स्वयं कहती है कि साधु संग बैठी बैठी लोकलाज खोई[6]।

मीरा बाई ने कृष्ण भक्ति के प्रेम को अपने पदों में व्यक्त किया। इनकी रचनाओं में नरसी का मायरों, राग सौरठ का पद मलहार राग, रास गोविन्द आदि प्रमुख हैं। पुरोहित हरिनारायण जी ने उनके पदों की संख्या 500 बताई हैं। नरसी जी का मायरों ने नरसी महता के भात भरने की कथा का उल्लेख है। राग सौरठ ने मीरा कबीर और नामदेव के पदों का संग्रह मीरा के स्फुट पद, मीरा

बाई की पदावली के नाम से प्रकाशित रूप में प्राप्त हैं।
मीरा बाई का काव्य उनकी हृदय से निकलने वाले प्रेम का साकार रूप है उनकी कविता का प्रमुख रस विप्रलम्ब श्रंगार है। उनकी विरह भावना का कोई ओर छोर नहीं है –

बिरहनी बावरी सी भई।
ऊचीं चढ़ी अपने भवन में टेरत हाये दई।।
लं अंचरा मुख अंसुवन पौंछत उगरै गात सही।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर बिछुरत कछु न कही[7]।।

मैीरा कृष्ण भक्ति में स्वयं राधा बन गई है। मीरा के पदों में रहस्यात्मक्ता का भी समावेश है। मीरा के पदों में हृदय की तार्व अनुभूति गहरी पीड़ा, संगीतमयी भाषा में अभिव्यक्त हुई है। अपने अनुभूतियों से निकटता बनाए रखने के कारण मीरा की अभिव्यक्ति में उनके व्यक्तिव की गहरी छाप मिल ती है। मीरा ने अन्य भक्त कवियों की तरह राधा या गोपियों की पीड़ा या विरह का वर्णन नहीं किया। अपितु कृण मिल में व्याकुल अपने ही विरह वेदना का वर्णन किया है। मीरा के पद बेशक कला की दृष्टि से उत्कृष्ट ना माने जाते हों लेकिन उनका भाव पक्ष अत्यंत पुष्ट है[8]।

''बसौ मोरे नैनन में नंद लाल,।
नहीं ऐसो जन्म बारम्बार।।
भज मन चरण– कंवल अभिनासी।
मेरे तो गिरिधर गोपाल।।

मीराबाई के काव्य की भाषा सामान्यतः राजस्थानी मिश्रित ब्रज है। इनके पदों में गुजराती, खड़ी बोली का भी पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है। इनके पदों में कभी कभी छंदों का भी निर्वाह हआ है इनके काव्य में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकार स्वतः उनकी वाणी का अनुसरण करते चले जाते हैं[9]।
मीराबाई मध्ययुगीन भक्ति धारा की एक प्रमुख सन्त थी। यह एक सन्त होने के साथ साथ एक ऐसी स्त्री भी थी जिन्होनें समाज के अनावश्यक बन्धनों को तोड़ा और वर्तमान में स्त्रियों के सामने आदर्श प्रस्तुत करती है। उन्होनें तत्कालीन गलत परम्पराओं का विरोध किया। जब इनके पति की मृत्यु तो तत्कालीन समाज की गलत प्रथा सती प्रथा को उन्होनें अस्वीकार कर दिया। यह एक तरह से रूढ़ीवादी के खिलाफ एक साहस भरा कदम था। उन्होनें पर्दाप्रथा को तिरस्कृत करते हुये एक सन्त का जीवन यापन किया। मीरा बाई ने हर कदम पर पुरूष प्रधान समाज के नारी विरोधी रीतिरिवाजों का चुनौती दी। पुरूषप्रधान समाज मेंउन्होनें पितृसत्तात्मकता के खिलाफ भी आवाज उठाई[10]। अपनी ससुराल को छोड़कर कृष्ण भक्ति में लीन होना और किसी का उन्हें ना रोक पाना उनके व्यक्तित्व के प्रभाव को दर्शाता है।

संदर्भ

1. डॉ0 नगेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास नैशनल पब्लिकेशन हाऊस पृ0 235
2. शर्मा शिवकुमार हिन्दी साहित्य युग एवं प्रवृतियां पृ0 290
3. उपरोक्त पृ0 290
4. उपरोक्त पृ0 291
5. नाहर, रतिभानुसिंह भक्ति आंदोलन का अध्ययन पृ0 338
6. राधे शरण मध्यकालीन भारतीय समाज एवं संस्कृति 1200 से 1750 ई0 पृ0 329
7. डॉ0 नगेन्द्र पूर्वोक्त पृ0 236
8. डॉ0 राधेशरण पुर्वोक्त, पृ0 329
9. डॉ0 नगेन्द्र, पूर्वोक्त पृ0 236
10. भसीन कमला : मीराबाई, भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा प्रकाशित पृ0 8